National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 1339-1340

मीरा के प्रेम दर्शन में वैश्म्य

अनुपम शर्मा[1], डॉ० तबस्सुम खान[2]
[1] शोधकर्त्ता, श्री सत्य साई विश्वविद्यालय ऑफ टेक्नौलाजी एण्ड मेडिकल साइन्सेस, सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत।
[2] शोध निर्देशक, श्री सत्य साई विश्वविद्यालय ऑफ टेक्नौलाजी एण्ड मेडिकल साइन्सेस, सीहोर, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश

प्रेम मानवीय संरचना का एक प्रधान तत्व है सम्पूर्ण मानव में इसी प्रेम का विस्तार है। यह प्रेम ही है जो विभिन्न सन्दर्भ और दिशायं ग्रहण करता हुआ जीवन को एक रचनात्मक स्वरूप प्रदान करता है। प्रेम ही निषेधात्मक दिशाएँ ग्रहण करके जीवन में विघटनकारी प्रवर्तियों को जन्म देता है। तात्विक रूप से प्रेम का शाश्धत और सामान्य मनोवृति और श्रीहर मनुष्य में बल्कि मनुष्य में नहीं जीवन की चेतना पर संस्कार रूप में विधामान रहती है इस आधार पर प्रेम का विकास एक सा होना चाहिए। प्रेम–दर्शनपरक द्रष्टि एक सी होनी चाहिए लेकिन ऐसा नहीं होता। मनोवॅज्ञानिक सत्य है कि मनोवतिया सन्दर्भ सापेक्ष होकर व्यक्ति चेतना के लिए व्यवाहरिक दाचा तेयार करती है व्यक्ति चेतना व्यावहारिक ढांचा ही उस व्यक्ति का अपना दर्शन बन जाता है। यही दर्शन जीवन साधना के रूप में उसकी अनुभूति का आधार बनता हैं।

मूल शब्द : प्रेम, मानवीय संरचना, जीवन साधना।

प्रस्तावना

मीरा का प्रेम शुद्ध रूप से जैविकीय आधार पर विकसित हुआ। प्रेम पुरूष को पुरूष और नारी को सम्बंध भाव से देखता हुआ विपरीत लिंगी के प्रति आकर्षण लिए हुए होता हैं। प्रेम के इस स्वरूप के मूल में शारीरिक सुख और उससे जन्य मानसी वृत्तियों के दोष की सम्भावना प्रबल होती है, मीरा का प्रेम इसी आधार पर विकसित होकर पुरूष रूप में कृष्ण को अपने जीवन का विकल्प मानता है। उसके साथ रमण की आशा, अभिलाषा, उत्कठा के साथ शारीरिक सुख और आत्मतोष प्राप्त करना चाहता है। भावात्मक स्तर पर होने के कारण मीरा यह प्रेम केवल चेतना का विषय बनकर रह जाता है। परिणाम स्वरूप चेतना को चेतना के साथ रमण इस शारीरिक और श्रंगार प्रेम को आध्यात्मिक की ओर ले जाता है। जिससे जैविकीय आधार बनाने वाली ''काम'' नामक ग्रंथि पर एकांत साधन का प्रेम परम प्रेम बन जाता। मीरा का यह प्रेम इसी आधार पर एकांत साधन का प्रेम बन जाता है। इसमें नारी मान की कामजन्य अनुभूतियों और उनका पुरूष सत्य उभरकर सामने आता है। इसके साथ ही मीरा के प्रेम–दर्शन से यह भी तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि जैविकीय प्रेम शारीरिक की प्यास से अधिक मन की प्यास भी है। जो निरंतर तृप्ति की आशा अभिलाषा में अपने आलम्बन की ओर उन्मुख होती है। मीरा के प्रेमा–दर्शन में यह भी व्यंजना है कि जैविकीय का प्रेम भी जब एक ही आलंबन में अनन्य भाव में केन्द्रित रहता है तब वह प्रेम है, यह भी विभिन्न आलंबन के साथ शारीरिक सुख या काम सुख का साधन बन जाय तो वासना का कीचड बन जाता है। मीरा अपने प्रेम को वासना की पंकिलता से निकालकर शुद्ध पावन प्रेम के रूप में लाने के लिए केवल कृष्ण को ही अनन्य भाव से अपना आलंबन बनाती है। इस प्रेम के तात्विक स्वरूप बोध के साथ चेतना के रमण रूप में प्रेम आध्यात्मिक प्रेम बन जाता है।

साहित्य की समीक्षा

पुस्तक में डॉ. विश्वनाथत्रिपाठी ने वर्णव्यवस्था, नारी और भक्ति आंदोलन, मैनेजर पाण्डेय ने मीराकी कविता और मुक्ति की चेतना तथा गोपेश्वरसिंह नेमीराके काव्य का सामाजिक पहलू जैसे आलेखों में मीरा और भक्ति आंदोलन के संबंध में महत्वपूर्ण विचार दिये है। इसी कड़ी में मीरा को नये ढंग से देखने का प्रयास प्रो. शिवकुमार मिश्र ने अपने आलेखस्त्रीविमर्ष में मीरा में किया है। वे मुक्ति के सवाल पर अधिक जोर देते हैं और उनका मत है कि बंधनों से अपनी मुक्ति का आग्रह मीरा में जरूर है परंतु उस मुक्ति की आकांक्षा के तार–स्त्री–जाति की वैसी ही मुक्ति से सीधे नहीं जुड़ते। प्रो. मिश्र का निष्कर्ष है कि मीरा का अपने पक्ष में अनुकूलन करने का काम व्यवस्था ने खूब किया है तथापि मीरा ने अपने समय में अपनी सीमाओं में जो किया, बड़ा काम था। उनका महत्व इस बात में है कि मुक्ति के सपने का उन्होंने पराधीन की आँखों में जीवित रखा। इन्ही अर्थों में जितना कबीर हमारे समकालीन हैं, उतना ही मीरा।

प्रेमः रहस्य और विस्तार

मीरा की जीवन साधना के प्रेम–तत्व का जो स्वरूप दिखाई देता है वह रहस्य भावना से भावित है। यह रहस्य भावना दोनी में एक–सा नहीं।

मीरा के प्रेम–दर्शन का रहस्य उनके सीमिम वैयत्तिक जीवन और पारिवारिक व्यवस्था में निहित है। सामाजिक मीरा के प्रेम रहस्य को उजागर करने में बहुत प्रत्यक्ष भूमिका अदा नहीं करती। यह सीधे–सीधे उसके अपने परिवार की कहानी है जो उसे प्रेम के रहस्य में जाने के लिए बाधित करती है। मीरा की चेतना को लौकिक राग से विमुख कर दिया। इस लौकिक राग से विमुख होकर मीरा ने विकल्प रूप में कृष्ण के प्रति अपनी चेतना पर संस्कार रूप में पडी हुई रागात्मिक वृति को जागृत किया। यह विकल्पात्मक रागात्मिक वृति के सम्बन्ध भाव का सुख प्राप्त करके प्रोढतर प्रेम में परिवर्तित हो गयी। जिससे कृष्ण की मीरा के प्रेम के आधार बन गए। मीरा का यह प्रेमालंबन कृष्ण ही उसके प्रेम के रहस्य का आधार बन गया जो प्रत्यक्ष होते हुए भी प्रत्यक्ष्ज्ञ नही था। यह कृष्ण स्थूल शारीरिक से निरंतर चितनंदन में परिवर्तित

होते हुए चेतन्य स्वरूपों में विकसित होता गया। परिणामस्वरूप मीरा के प्रेम का विस्तार नितांतर व्यक्तिनिस्ठ होकर आत्मकेंद्रित ही बना रहा।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है, कि कबीर का प्रेम–रहस्य और उसका विसफार एक व्यापक सामाजिक सुव्यवस्था को दिशा प्रदान करने वाला है। जबकि प्रेम के प्रेम–दर्शन का रहस्य और विस्फार जग्रति वृतियों को लौकिक बन्धनों से मुक्त करके आध्यात्मिक दृष्टि प्रदान करते हुए चेतना का उन्नयन करता है।

प्रेम की अनुभूति कि अभिव्यक्ति के भावत्मक आधार

मीरा की अपनी प्रेमानुभूति को व्यापक आयाम नही देती। वह केवल माधुर्य भाव से ही अपने आलंबन से प्रेम सम्बंध का निर्वाह करती है। माधुर्य भाव की अनुभूति के साथ विभिन्न मधुर भाव–भंगिमाएं दिखाती हुई मीरा कहीं अपने कृष्ण के आगे नृत्य करती है, तो कहीं उसके लिए आंसू बहती हैं। इससे मीरा के प्रेम में गहराई तो अवश्य दिखाई देती हैं। लेकिन प्रेमक का भावत्मक विस्तार दिखाई नहीं देता। विश्रघात्मक रूप हिमालय की ऊँची चोटियों से निकलकर रास्ते में पड़ने वाली सभी वनस्पतियाँ को संचित करता हुआ सभी जीवों को शीतल स्पर्श देता हुआ चेतन्य रूप समुन्द्र में लि जाना चाहता है दूसरी तरफ मीरा का प्रेम वह जल स्त्रोत है जो अन्तस्य की गहराईयों से फूटता हुआ चेतन्य सत्ता की ओर उन्मुख होकर अपने आस–पास की भरा रहता है। मीरा की इस भावात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के पीछे इनके अपने प्रेम–दर्शन की आधारशिला है।

प्रेम के क्षेत्र की सीमीयें

सामान्य रूप से देखने पर कबीर और मीरा के प्रेम के क्षेत्र की सीमियाँ परम सत्ता के आध्यात्मिक स्वरूप के इर्द–गिर्द घूमती दिखाई देती हैं। गंभीरता से विचार करने इन दोनों के प्रेम कि व्यापकता का क्षेत्र बहुत अंति लिए हुए हैं।

> ते ताँ निनार निरंजना, आदि अनादि न ऑन।
> कहत सनत को कीन्ह जग, आपे आप भुलान।
> जिनी नटवे नटसारी साजी जो खेले सो दीसे बजी।

इस तरह एक अन्य स्थान पर परम सत्ता को विराट सगुन रूप में प्रस्तुत करते हैं– जिही जग की तरस के तस के ही आप आथि है एही।

> कोई न लखई वाका भेड़, भेड़ होई ताँ पावे भेउ.।

प्रेम का आध्यात्मिक, साधना में आविभीय का स्वरूप

मीरा ने प्रेम–तत्व को अध्यात्मिक साधना का साधन बनाया गया है। मीरा की आध्यात्मिक साधना भक्ति साधना में पर्यवसित होकर प्रेम को भावात्मक सम्बंध से व्यवहारिक रूप देती है। इसके विपरीत कबीर अध्यात्मिक साधना मन साधना, पद मुक्ति सुरति साधना और भक्ति साधना के रूप में साकार होती है।

मीरा का प्रेम–दर्शन लोक–व्यवहार के आधार पर भावात्मक पर भावात्मक सत्ता का आश्रय ग्रहण करके अनुभूति की गहराईयों के साथ केवल चेतन सत्ता से सम्वन्ध जोडने का अवकाश खोलता है। मीरा का प्रेम–दर्शन भावुकता से बौद्धिकता की ओर जाता है। बौद्धिकता के स्तर पर भी वैचारिक स्थितियां भावुक की परतों में लिपटी रहती है। अतः मीरा का प्रेम–दर्शन प्रेम की अनुभूति की गहराईयों में छिपा जाता है। और वह कबीर की तरह व्यापक स्वरूप ग्रहण नहीं कर पाता।

उपसंहार

प्रेम परिपका की प्रक्रिया का सीधा सम्बन्ध प्रेम की उद्धावना हैं। मीरा में प्रेम की उद्धावना अलग–अलग रूप में हुई है। मीरा के प्रेम के परिपाक की प्रक्रिया में एहिक अभावों के विकल्प की तलाश है। यह विकल्प प्रेम के परिपाक के साथ स्थूल से सूक्ष्म की और चलता चला जाता है। अतः मीरा के प्रेम परिपाक प्रक्रिया में लौकिक सम्बन्धों में भावना का पुट हैं। यह भावना आध्यात्मिक रस की है। मूल द्रव्य मीरा का संस्कारित लौकिक मन और आध्यात्मिक सत्ता के रूप में सगुन कृष्ण है। आध्यात्मिक भावना के साथ–साथ प्रेम के परिपाक में लौकिक भावना का पुट भी दिया गया है। भावना के माध्यम से परिपाक की यह प्रक्रिया विभिन्न आसक्तियों अनुभूतियों लालसाओं भावनाओं से गुजरती हुई प्रेम की सिद्धि तक पहुँचती है।

संदर्भ

1. राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला मीरा व्रहत्पदावली पुरोहित जी
2. त्रिपाठी विश्वनाथ, मीरा का काव्य, वाणी प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण 1989।